कोई भी काम छोटा नहीं होता है, फिर समाज भेद–भाव क्यों करता है ?

मनोज ठक्कर और रश्मि छाजेड़ का शिव ऊँ साँई प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उपन्यास "काशी मरणान्मुक्ति" गुरू–शिष्य के अध्यात्मिक संबंध पर आधारित है, जिसके मूल में श्रद्धा है। नायक एक चांडाल है जो अपने गुरू और ईश्वर के प्रति असीम श्रद्धा रखता है और श्रद्धा का संबंध मन और भावना से होता है, कर्म से नही। लेखकों ने बताया है कि इंसान सबसे पहले एक इंसान होता है, बाद में कुछ और। उसका पेशा और उसकी श्रद्धा दो अलग–अलग चीजें हैं। साथ ही यह भी बताया है कि दिव्यता का अंश हर इंसान में होता है, यह अलग बात है कि वह उसे कितना प्रकाशित कर पाता है। मान्यता है कि काशी में देह त्याग से मानव मुक्ति पाता है, लेकिन "भूमिका" में लेखकद्वय ने बताया है, "संसार का सर्वोच्च तीर्थ तो स्वयं की काया है" जिसमें शिव निवास करते हैं। असल में साधक का देह–भाव से मुक्त हो जाना ही मुक्ति है और ऐसा तभी संभव है जब वह स्वयं के सच्चे और असली स्वरूप यानी अपनी आत्मा से परिचित हो। कहानी का अधिकांश भाग काशी के घाटों पर घटित होता है जहाँ रात–दिन शवों का संस्कार होता रहता है। लेकिन शिव चिता की अग्नि और रात के अंधकार में भी नायक महा के मन में प्रकाश और चेतन तत्व की प्रेरणा देते रहते हैं। "शिवपुराण" इस पुस्तक का मूल आधार है। पूर्वार्द्ध और उत्तरार्ध, दो भागों में बंटे इस उपन्यास में 69 अध्याय हैं। हर अध्याय का आरंभ शिव–महिमा के उद्धरणों से ओर अंत एक ही वाक्य "पर याद रख मै तेरा गुरू नहीं" से होता है। कबीर और तुलसी के साथ अन्य संत भी महा के भाव जगत में विचरण करते हैं। लेखको ने भारतीय अध्यात्मिक मान्यताओं और एक साधक की भावस्थिति के क्रमशः विकास का बहुत ही सहज, स्वाभाविक और अच्छा वर्णन किया है।

फाफामऊ कस्बे के श्मशान में एक स्त्री अपना नवजात शिशु छोड़ जाती है। निःसंतान दम्पति यशोदा और राघव उसे उठा लाते हैं और नाम देते है महा। काशी में इस्माइल चाचा और चांडाल भूतनाथ के बीच बच्चा पलता है। नशे में राघव एक दिन गंगा में डूब जाता है। तीन साल का महा संस्कार करता है फिर पास की चिता भस्म में लोटने लगता है। भस्म प्रेम बढ़ता जाता है। माँ मान लेती है कि उसमे किसी संत आत्मा का वास है। 13 साल का महा शवदाह में भूतू की मदद करने लगता है। श्मशान में भी परिजनों का अहंकार उसे दुखी करता है। संवेदनशील महा को संसार का अर्थ और अर्थहीनता भी परेशान करती है। यह एक साधक की उत्सुकता थी। कबीर उसके प्रश्नों का समाधान करते हैं, "चलना केवल स्वयं तक है और निज स्वभाव ही गंतव्य है।" युवा महा के इंद्रियों और काम आकर्षण प्रसंग को "बुड़वा मंगल" मेले के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। भूतू महा को एक बजरे में एक गणिका के साथ बिठाता है किंतु वह आसक्ति के बजाए श्रद्धा से उसकी तरफ देखता है और वह उसे अपना गुरू मान लेती है।

सर्वधर्म समभाव के प्रतीक इस्माइल चाचा, समझदार भूतनाथ और भक्त बुद्धेश उपन्यास के अन्य महत्वपूर्ण पात्र हैं। वैसे रचना का सबसे सशक्त पात्र तो काशी है, जिसके केन्द्र में शिव है। चाचा ने महा की माँ को समझाया था "अल्लाह से बंधने वाले को तू कैसे बांधेगी ?" एक दिन महा एक संत को प्रणाम करता है। उत्तर मे वे डाँटते है। महा की नजर में कोई भी काम छोटा नहीं था फिर समाज अंतर क्यों करता है ? भूतू उसे स्वयं को जानने की सीख देता है। महा बुद्धेश के साथ चारों धाम और बारह ज्योर्तिलिंग की यात्रा

करता है, लेकिन उसने कभी किसी मंदिर में प्रवेश नहीं किया था। वह केवल कलश दर्शन करता था। गंगोत्री से लौटने में एक नागा साधू महा को दीक्षा देते हैं। उसकी साधना सघन होती जाती है। जप–ध्यान बढ़ता है और देह भान घटता जाता हैं। सोमनाथ के रास्ते पर वह तेज धूप में बालू रेत में लोटता है। महा की साधना में गुरू का सानिध्य सतत बना रहता है।

गुरू ने कहा था जब तक चित्तशुद्धि नहीं होगी, तब तक आत्मानुभूति नहीं होगी। अप्पो दीप भवं। यात्रा में महा को अनुभव होता है कि सगुण को साध कर ही निर्गुण को साधा जा सकता है। पुस्तक में अनुभवों के साथ चमत्कार भी हैं। भाव जगत में वे संभव हैं और भक्त की भावना को बल देते है। पूरी कहानी में एक काला नाग महा के जन्म से अंत तक प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से उसके साथ बना रहता है। सर्प शिव का आभूषण है और महा एक शिव भक्त है। यात्रा में एक व्यक्ति (अश्वथामा) महा से घी मांगता है। वह मना करता है। अचानक उसकी थैली से घी निकल आता है। बेलापुर के भीलों की मान्यता थी कि जिन भक्तों पर माता का भार प्रकट होता है गायें उनके ऊपर से निकलने पर भी उन्हें नहीं कुचलती हैं। एक ब्राह्मण की फूलमालाएँ द्वारकाधीश को गले मे न पड़कर महा के गले में आ जाती हैं। इसी कड़ी में महा एक बच्चे की बीमारी अपने ऊपर लेकर उसे जीवनदान देता है। सोये हुए बुद्धेश को अपनी शक्ति सौपना और सपने में महा के गुरू द्वारा बुद्धेश को महा के अंतिम संस्कार की विधि बताना भी इसी तरह की घटनाएँ हैं। इनकों तर्क की कसौटी के बजाए एक भक्त की भावना से देखना बेहतर होगा।

पुस्तक का अंत करूण है। बीमार, कमजोर और खून की उल्टियाँ करते महा की काशी में मृत्यु होती है। घाट भीड़ से पटा था, तभी भागता हुआ बुद्धेश महा की शिवपिंडी के साथ आता है "मुझे इनके संस्कार की विधि मालूम है।" नृत्य, वाद्य और वेदमंत्रो के साथ महा की पालकी उठती है। उसकी आत्मा शिवतत्व में विलीन हो चुकी थी। पुस्तक के हर अध्याय के बाएं पृष्ठ पर शिव महिमा के उद्धरणो और दाएं पृष्ठ पर महा–कथा में आपस में जुड़ाव नही होने से पठनीयता बाधित होती है और पठनीयता किसी पुस्तक की पहली शर्त होती है। रचना में पुनरावृत्ति भी खूब है, जिससे बचा जा सकता था। रचना के आरंभ में संवाद कम हैं, वर्णन अधिक है। अध्यात्मिक विषय होने के कारण भाषा गंभीर और शालीन है लेकिन गुरू और शिष्य की भाषाओं में अंतर होना चाहिए था। महा एक अनपढ़ चांडाल है जिसका सभ्य समाज के साथ कभी कोई संबंध और संपर्क नही रहा है। इस सबके बावजूद लेखकों ने एक अनछुए और गंभीर विषय पर पुस्तक लिखने के लिए गहरा अध्ययन और कठिन परिश्रम किया है।

डॉ. हेमलता दिखित

डॉ. हेमलता दिखित
115, श्रीनगर एक्सटेंशन
इन्दौर 452 018 म.प्र.
फोन : 0731 – 2562187